23 स्कूल प्रमुख के रूप में प्राचार्यः एक विद्यार्थी की दृष्टि से

रजनी द्विवेदी

स्कूल! जब भी मैं स्कूल के अपने दिनों के बारे में सोचती हूँ, तो मुझे अपने दोस्तों की याद आ जाती है – उनके साथ खेलना, शरारतें करना और उनके साथ रहने में आने वाला सहज सुख और आनन्द। मैं याद करती हूँ मुझे पढ़ाने वाले शिक्षकों को, पुस्तकालय की किताबों को, स्कूल की पढ़ाई–लिखाई और खेल–कूद को तथा और भी कई बातों को। बहुत से अन्य लोगों की तरह, बचपन और स्कूल मेरी सबसे प्यारी और सबसे स्पष्ट यादों का हिस्सा हैं। स्कूल के अपने बाद के सालों और कॉलेज के वर्षों के बहुत सारे शिक्षकों के बारे में मेरी खूबसूरत यादें हैं। यह बात शायद हममें से कइयों के लिए सही है। लेकिन जब मैं स्कूल के बारे में सोचती हूँ तो दिमाग पर सबसे अधिक असर हमारे प्राचार्य या, जैसा कि हम उन्हें कहते थे, प्रिंसिपल सर का पड़ता है।

मैं और मेरे संगी–साथी अपनी पढ़ाई और ऊपर उल्लिखित विभिन्न अन्य गतिविधियों में लगे रहते थे। हमारे पास बहुत स्वतन्त्रता रहती थी। हम अपने शिक्षकों से बात कर सकते थे और बहुत बार जो मर्जी होती, वह करते थे।

फिर एक दिन हमने एक नए, अनजान व्यक्ति को स्कूल के बरामदों में घूमते देखा। हम सोच में पड़ गए कि वे कौन हो सकते हैं। वे किसी पालक जैसे तो नहीं दिख रहे थे और हमें यह पता था कि वे स्कूल के कोई शिक्षक नहीं हैं। पर वे किसी भी तरह से प्रभाव डालने वाले या डर पैदा करने वाले नहीं प्रतीत हो रहे थे। वे स्कूल के बरामदों में घूमते किसी भी बड़ी उम्र के अन्य व्यक्ति की तरह लग रहे थे।

हमने कुछ देर तक आपस में उनके बारे में चर्चा की, लेकिन किसी नतीजे पर नहीं पहुँच सके और फिर भूल गए। हमारी जिज्ञासा बहुत अधिक समय तक रहने वाली नहीं थी क्योंकि हमारे पास करने को और बहुत कुछ रोचक था। पर अगली सुबह प्रार्थना सभा में हमारी प्रधान शिक्षिका ने उन सज्जन से हम सबका परिचय करवाया और बताया कि वे हमारे नए प्राचार्य हैं। हमारे पूर्व प्राचार्य छः महीने पहले सेवानिवृत्त हो चुके थे। लेकिन प्राचार्य के बारे में हमारी धारणा अभी भी उन्हीं पर आधारित थी। तो हमारे दिमाग में वही छवि थी और हमें नए प्राचार्य के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध बन पाने की आशा नहीं थी।

धीरे–धीरे हम अपने नए प्राचार्य को और अधिक जानने लगे। स्कूल में अपनी नित्य दिनचर्या के दौरान अक्सर उनसे यहाँ–वहाँ हमारी भेंट हो जाती। शुरुआत में हमें लगता, ओह! प्राचार्य आ रहे हैं, हम रास्ते से हट जाते हैं। वे तो बहुत व्यस्त होंगे और उनके दिमाग पर बहुत कुछ सवार होगा। उनके पास हम पर बरबाद करने को समय कहाँ है। उन्हें हमारी जरूरत ही कहाँ है। और – ऐसा क्या होगा जिसके बारे में वे हमसे बात करना चाहें। हम इस बात से हैरान होते थे कि जब भी हम आमने–सामने आ जाते, तो वे रुककर हमसे बात करते। यह केवल एक या दो बार नहीं हुआ बल्कि तकरीबन हमेशा ही ऐसा होता था। कभी–कभी वे हमें सुबह की प्रार्थना सभा में रोक लेते, कभी खेल–मैदान में हमसे बात करते। उनके पास हमेशा ही हमसे बात करने के लिए समय होता था; लगता था कि उनके पास इससे ज्यादा जरूरी और कोई काम नहीं है।

हम अक्सर उन्हें हाल–चाल जानने के लिए होस्टल की ओर जाता देखते और रास्ते में वे बच्चों से बात करते जाते। जल्दी ही मुझे समझ में आ गया कि वे ऐसा सिर्फ हम कुछ बच्चों के साथ ही नहीं करते थे बल्कि वे तो सभी बच्चों के साथ बात करते थे। सभी बच्चों को लगता था कि वे प्राचार्य को व्यक्तिगत तौर पर जानते हैं और प्राचार्य उनसे बहुत स्नेह करते हैं। बल्कि, अक्सर ही अन्तिम घण्टी के बाद बच्चे जब कक्षाओं से बाहर निकलते तो उन्हें रास्ते में इन्तजार करता हुआ पाते और फिर वे बच्चों से विभिन्न चीजों के बारे में तथा स्कूल में उनके अनुभवों के बारे में बात करने लगते। वे हमारे बारे में ही बात करते थे – हम किस बारे में सोच रहे होते, हमारे सपने क्या थे आदि। वे हमसे पूछते कि कक्षाओं में हमें कैसा लगता है, हम किन बातों से डरते हैं और हमारे पसन्दीदा विषय क्या हैं, इत्यादि। वे तात्कालिक राजनीतिक–सामाजिक परिस्थिति पर परिहास भी कर दिया करते थे। उन्होंने खेलों में हमारी दिलचस्पी को बढ़ावा दिया और वे हमसे पूछते थे कि भारत की फुटबॉल टीम के लिए कैसे आसार दिखाई देते हैं? ऐसा लगता था कि वे हमारा ध्यान क्रिकेट से हटाकर दूसरे खेलों में लगाना चाहते हैं। वे किसी आम स्कूल प्राचार्य से काफी अलग थे; निश्चित ही प्राचार्य की हमारी धारणा के तो बिलकुल विपरीत थे।

उनसे बात करने पर शुरुआत में हमें जो भय और हिचक होती थी वह धीरे–धीरे हवा हो गई, और हमारे वार्तालाप काफी स्वाभाविक हो गए। हमें यह इच्छा रहती थी कि वे हमसे टकरा जाएँ और फिर बातें करें। पर फिर भी जब हमसे कोई गलती हो जाती थी या कोई नियम टूट जाता था तो हम उनके सामने जाने से बचते थे। हमें लगता कि चूँकि हमसे गलती हुई है अतः कोई न कोई दण्ड तो हमें

सभी बच्चों को लगता था कि वे प्राचार्य को व्यक्तिगत तौर पर जानते हैं और प्राचार्य उनसे बहुत स्नेह करते हैं। बल्कि, अक्सर ही अन्तिम घण्टी के बाद बच्चे जब कक्षाओं से बाहर निकलते तो उन्हें रास्ते में इन्तजार करता हुआ पाते और फिर वे बच्चों से विभिन्न चीजों के बारे में तथा स्कूल में उनके अनुभवों के बारे में बात करने लगते।

जरूर मिलेगा, जिससे हम सभी के समक्ष अपमानित और निन्दित महसूस करेंगे। हमें डाँटे–डपटे जाने और जुर्माना लगाए जाने की आदत थी। लेकिन जब हमें ऐसा लगने लगा कि हमारी उनके साथ मित्रता–सी हो गई है, तो हमारा डर जाता रहा। हमें लगा कि अब कोई दण्ड नहीं मिला करेगा। पर ऐसा नहीं था। वे गलतियों की ओर ध्यान दिलाने के मामले में बहुत सख्त थे। लेकिन उनका दण्ड अनोखा हुआ करता था। गलती करने वाले को या तो कक्षा की, या फिर खेल–मैदान की सफाई करनी पड़ती थी, या फिर स्कूल–भोजनालय में बर्तन साफ करने पड़ते थे। कई बच्चे विनती करते थे, "सर, इसके बजाय कृपया हम पर जुर्माना लगा दीजिए। हम आइन्दा ऐसा नहीं करेंगे।" वे नहीं मानते थे और कहते, "जुर्माना तुम नहीं भरते, तुम्हारे माता–पिता भरते हैं। गलती तुमसे हुई, अतः भुगतान भी तुम्हें ही करना पड़ेगा। चूँकि गलती तुमने की है, अतः दण्ड भी तुम्हें ही भुगतना चाहिए।"

धीरे–धीरे उनके कारण स्कूल में कुछ बातें अलग लगने लगीं। हम सब एवं शिक्षकगण समय के बेहद पाबन्द हो गए, सभी कक्षाएँ लगती थीं और ठीक समय पर शुरू होती थीं। और क्यों न होतीं। प्राचार्य हमेशा ही बाकी सबसे पहले स्कूल पहुँच जाते और सबसे अन्त में जाते थे। उन्हें स्कूल के बारे में सब कुछ पता था। क्या कहाँ पर है, क्या हो रहा है – कहाँ और कब, कौन किस बात के लिए जिम्मेदार है और उसे कैसी मदद की जरूरत है। उन्हें न सिर्फ यह सब पता था बल्कि यह भी मालूम था कि समर्थन कैसे जुटाना है, लोगों में कैसे मूल्यवान होने का अहसास जगाना है, और यह कि स्कूल तथा प्राचार्य उनकी सहायता के लिए सदैव तत्पर हैं।

किसी प्राचार्य की जिम्मेदारियाँ क्या होती हैं? उन्हें इसका पूरा भान था कि स्कूल की, शिक्षकों की और उनके विद्यार्थियों की क्या जरूरतें हैं या वे क्या चाहते हैं। उनके पास इन सबके अधिकारों के लिए किसी से भी जूझने की क्षमता और पक्का इरादा था। यदि वे चाहते तो स्कूल में किसी को कम और किसी को अधिक समझते हुए पदानुक्रम व्यवस्था लागू कर सकते थे क्योंकि प्राचार्य सभी प्रकार के निर्णय खुद लेने के लिए अधिकृत होता है, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। न केवल बच्चों, शिक्षकों, और बच्चों के पालकों के साथ बल्कि स्कूल के सभी लोगों के साथ उनका सम्बन्ध और व्यवहार मित्रवत तथा स्वाभाविक था। वे अटल प्रवृत्ति के थे और किसी तरह की गैर–जिम्मेदारी और प्रतिबद्धता–रहित रवैये से समझौता करने वाले नहीं थे। मगर उनके हस्तक्षेप का ढंग इतना अलग और अभिनव था कि आपको यह नहीं लगता था कि ठीक काम न करने के कारण आपकी खिंचाई की गई है। बल्कि लगता था कि आपको मशविरा दिया जा रहा है, आपके काम की प्रशंसा की जा रही है तथा और बेहतर करने के लिए प्रेरित किया जा रहा है।

वे बेहद ऊर्जावान और चुस्त थे। एक पल उन्हें यहाँ देखा जाता और अगले ही पल कहीं और। हर बात उन्हें याद रहती थी। वे बहुत जल्दी निर्णय लेते थे और उन्होंने स्कूल के विकास के लिए कई कदम उठाए। यह सब लिखते हुए मैं न केवल उनके साथ हुए तमाम अनुभवों को याद कर रही हूँ बल्कि मैं उनका विश्लेषण भी कर रही हूँ, लेकिन जब हम बच्चे थे तब हम उनके बारे में बात करते वक्त बस यही कहते थे कि "हमारे सर अद्‌भुत हैं।"

मुझे प्राचार्यों की श्रेणी से सम्बद्ध अधिक जानकारी नहीं है – आप हमारे प्राचार्य को ऐसी श्रेणी में कहाँ रखेंगे और उनके किन लक्षणों को किसी अच्छे प्राचार्य की विशेषताओं के रूप में शुमार करेंगे, यह भी मैं शायद नहीं कह सकती। लेकिन यह तो तय है कि हम उनके रहते बहुत खुला और सुरक्षित महसूस करते थे। सब कुछ अधिक सुगम प्रतीत होता था। हम स्कूल से गायब नहीं रह सकते थे, उतनी शरारतें भी नहीं कर सकते थे। लेकिन फिर भी बहुत स्वतन्त्र महसूस करते थे। बहुत स्पष्ट था कि स्कूल की इस बेहतरी में उनका बहुत बड़ा हाथ था और शिक्षक उनका बहुत आदर करते थे। वे वाकई में उनके अगुआ थे। मुझे अब भी आश्चर्य होता है कि वे यह सब कर पाए और सभी पर सकारात्मक असर छोड़ पाए। क्या उनका व्यक्तित्व ही करिश्माई था या फिर वे जो भी करते थे उसके पीछे एक सोचा–समझा तरीका था जिससे हम कुछ सिद्धान्त हासिल कर सकते हैं?

मैं अकसर सोचती हूँ कि प्राचार्यों के बारे में तथा स्कूली नेतृत्व को लेकर चर्चा करते समय हम विद्यार्थियों के दृष्टिकोण के बारे में भूल ही जाते हैं और इस बात को अनदेखा कर देते हैं कि वे अपने प्राचार्य को किस दृष्टि से देखते हैं। मैंने बहुत अच्छे ढंग से चलने वाले ऐसे सुप्रबन्धित स्कूल भी देखे हैं जिनके प्राचार्य औपचारिक, दूरी बनाकर रखने वाले और एक तरह का डर पैदा करने वाले थे। पर हमारे प्राचार्य की याद आज भी मन में ताजा है क्योंकि वे हम सबके बहुत करीब थे। मैं यह पक्के तौर पर नहीं कह सकती कि बाकी सभी वयस्क भी उन्हें उसी तरह देखते थे जैसे कि हम; न ही मैं पक्के तौर पर यह कह सकती हूँ कि उन्होंने जो किया, उससे वह स्कूल श्रेष्ठतम सम्भावित स्कूल बन गया। लेकिन हमारे लिए तो वे हमेशा ही एक प्रेरणास्रोत और मित्र की तरह बने रहेंगे।

रजनी द्विवेदी वर्तमान में छत्तीसगढ़ एजुकेशन रिसोर्स सैन्टर (विद्या भवन सोसायटी का एक सहयोगी संगठन) के साथ काम कर रही हैं। शिक्षा के क्षेत्र में अपने छः साल के अनुभव में उन्होंने बिहार, छत्तीसगढ़, झारखण्ड और राजस्थान राज्य–दलों के साथ मुख्यतः शिक्षक–प्रशिक्षण और पाठ्यपुस्तक–निर्माण का कार्य किया है। उनसे rajni@vidyabhawan.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।